RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17, अंक-1, दिसम्बर 2023 जनवरी फरवरी 2024

रासो
त्रैमासिक शोध पत्रिका
2005
॥ स्वस्ति पन्थामनु चरेम ॥

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष–17 अंक – 1 दिसम्बर 2023–जनवरी–फरवरी–2024

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** – पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** – प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** – प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** – पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** – पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** – सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** – पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** – आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** – पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

यजुर्वेद में स्त्रियों के सामाजिक राष्ट्रीय अधिकार और कर्त्तव्य का विवेचन

अनिता मालिया
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

महर्षि दयानन्द कृत यजुर्वेद भाष्य में स्त्री और यज्ञ

यजुर्वेद में स्त्री के सामाजिक, राष्ट्रीय अधिकार और कर्तव्यों का स्वरूप महर्षि दयानन्द के भाष्य के आधार पर जितना स्पष्ट और प्रामाणिक मिलता है, उतना अन्यत्र दुर्लभ है। वेद की मूल भावना यह है कि स्त्री पुरुष से किसी भी रूप में हीन नहीं, बल्कि समान रूप से धर्म, ज्ञान, संस्कृति, यज्ञ और समाज-निर्माण में सहभागी है। महर्षि दयानन्द के भाष्य में स्त्री को केवल प्रेरणादात्री नहीं, बल्कि यज्ञ के सम्पूर्ण कर्म में पूर्णाधिकारी माना गया है। वे 'पत्नी' शब्द का अर्थ केवल घर-गृहस्थी में सीमित न बताकर उसे धार्मिक और याज्ञिक उत्तरदायित्व से युक्त बताते हैं।

यजुर्वेद में जहाँ 'होत्रा' शब्द आता है वहाँ दयानन्द जी उसका अर्थ यह करते हैं कि स्त्री भी अग्निहोत्र तथा हवन कर्मों को विधि से संपन्न कर सकती है। यह केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं बल्कि समाज के नैतिक और सांस्कृतिक आधार को स्थिर रखता है, इसलिए स्त्री का योगदान सीधे राष्ट्र के उत्थान से जुड़ता है। इसके समानांतर उन्होंने ब्रह्मचारिणी कन्याओं को भी यह निर्देश किया कि वे विवाह के पश्चात् पतिव्रता होकर, पति के समीप रहते हुए, अग्निहोत्र और यज्ञ कर्म में बुद्धि स्थापित रखें। यह व्याख्या स्पष्ट करती है कि वेदकाल में स्त्री ज्ञान, अनुशासन और धर्मकर्म में पुरुष के समान स्थान रखती थी।

सभाध्यक्षों की पत्नी के संबंध में भी दयानन्द कहते हैं कि वह समाज में सुख और संपन्नता देने वाली, प्रगति की प्रेरक, और यज्ञ में सहायक होती है। यह दर्शाता है कि सामाजिक नेतृत्व और राष्ट्रीय जीवन के निर्माण में स्त्री की भूमिका मूलाधार थी। ऐसी स्त्री केवल निजी क्षेत्र में सक्रिय नहीं रहती थी, बल्कि वह समाज की व्यवस्था और प्रगति को यज्ञ के माध्यम से स्थिर रूप प्रदान करती थी। यह वेद की दृष्टि में स्त्री को राष्ट्र के धर्म, अर्थ और संस्कृति के संरक्षण की सक्षम धारक प्रमाणित करता है।

यजुर्वेद में शिक्षा का अधिकार स्त्री को पूर्णतया प्राप्त था। दयानन्द एक मंत्र के भाष्य में बताते हैं कि विदुषी स्त्री स्वयं वेद-विज्ञान का अनुसरण करती है और अन्य स्त्रियों को भी उस ज्ञान के लिए प्रेरित करती है। यह एक प्रकार से विद्यापरायण संस्कृति का संकेत है जिसमें स्त्री के लिए विद्वत्ता और अध्यापन कोई निषिद्ध क्षेत्र नहीं था। वह यज्ञ-विज्ञान को धारण करती है, उसके रहस्यों को समझती है और उस ज्ञान को समाज में प्रसारित करती है। इस प्रकार वेद में स्त्री को केवल शिक्षित होने का ही अधिकार नहीं बल्कि समाज को शिक्षा देने का कर्तव्य भी विद्यमान था।

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

संस्कारों के संदर्भ में तो दयानन्द ने स्पष्ट कथन किया है कि स्त्रियों को भी उपनयन, यज्ञोपवीत, गुरु-गृह में वास और आजीवन ब्रह्मचर्य जैसे संस्कार प्राप्त होते थे। यह न केवल धार्मिक अधिकार का बोध कराता है, बल्कि उस समय स्त्री की बौद्धिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वतंत्रता का द्योतक भी है। यह स्थिति केवल परिवार तक सीमित नहीं थी, बल्कि समाज की समता को उजागर करती थी। उपनयन का अधिकार दर्शाता है कि उसे वेदाध्ययन का अधिकार प्राप्त था और वेदाध्ययन समाज-निर्माण का मूल आधार है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि यजुर्वेद भाष्य स्त्री को यज्ञ करने और उसमें सहभागी होने का अधिकार देता है, साथ ही समाज में ज्ञान-विज्ञान का संवर्धन भी उसके द्वारा होता है। वेद में स्त्री केवल अनुयायी नहीं, बल्कि धर्म, शिक्षा, संस्कृति और राष्ट्रीय जीवन की सह-निर्माता है। इसलिए वेदकालीन समाज में स्त्री की स्थिति केवल सम्मानित ही नहीं बल्कि समाज की रीढ़ के समान थी। यह दृष्टि आज के भारत के लिए भी मार्गदर्शक है कि स्त्री के सक्रिय योगदान के बिना संतुलित समाज और सुदृढ़ राष्ट्र की कल्पना नहीं की जा सकती।

ईश्वरोपासना

यजुर्वेद भाष्य में स्त्री की ईश्वरोपासना संबंधी व्याख्या यह प्रमाणित करती है कि धर्म के क्षेत्र में स्त्री को पुरुष के समान ही अधिकार प्राप्त हैं। उपासना, आराधना, प्रार्थना और सन्ध्या जैसे आध्यात्मिक कर्म किसी के लिए भी वर्जित नहीं माने गए, बल्कि स्त्री के लिए तो इनका विशेष महत्व स्वीकार किया गया है।

प्रारम्भ में यह उल्लेख मिलता है कि धर्मकर्म में ईश्वरोपासना सबसे प्रधान मानी गई है। महर्षि वाल्मीकि की रामायण में सीता द्वारा संध्या-वंदन किए जाने का उल्लेख इस तथ्य का प्रमाण है कि संध्या करना स्त्री का नित्य कृत्य था। महाभारत स्त्रियों को मोक्षधर्म में विनीत बताते हुए यह संकेत देता है कि आध्यात्मिक उन्नति में स्त्रियाँ किसी भी प्रकार पिछड़ी या प्रतिबंधित नहीं थीं। यही स्थिति पुराणों में वर्णित ब्रह्मवादिनी नारियों की है, जिन्होंने परमात्मा के ज्ञान और उपासना मार्ग को पूर्ण बल से अपनाकर उस पद को प्राप्त किया।

यजुर्वेद भाष्य में स्त्री द्वारा प्रभु से प्रार्थना का जो स्वरूप मिलता है, वह अत्यंत हृदयग्राही तथा भावनात्मक है। वहाँ स्त्री परमेश्वर को पिता, राजा, मित्र और रक्षक के समान संबोधित कर उनसे प्रकाशमय ज्ञान और अहिंसाजन्य जीवन की कामना करती है। उसके द्वारा यह निवेदन किया जाता है कि परमेश्वर उसे शुद्ध बुद्धि प्रदान करें, उसे धर्ममार्ग पर स्थिर करें, संतान और समाज को कल्याणमय बनाएं तथा पति के साथ अहिंसा सहित जीवन व्यतीत करने में उसकी सहायक हों। यह ईश्वरोपासना केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि व्यवहारिक रूप में समाज-नियमन और सदाचार का भी आधार है।

दयानन्द के भावार्थ में यह स्पष्ट टिप्पणी आती है कि स्त्रियों को परमेश्वर की नित्य उपासना करनी चाहिए, और उसी से वे सभी सुख प्राप्त करती हैं। यहाँ उपासना को सौभाग्य, सुरक्षा, ज्ञान, प्रसन्नता और सामाजिक कल्याण से जोड़ा गया है। इस दृष्टि से उपासना स्त्री के आध्यात्मिक अधिकार का ही नहीं, बल्कि उसके नैतिक, सामाजिक और पारिवारिक कर्तव्य का भी अंग है।

संध्या-वंदन को स्त्री के नैत्यिक कर्मों में सम्मिलित किया गया है। यह स्पष्ट है कि संध्या केवल धर्मात्मक परंपरा नहीं बल्कि ईश्वर से पिता-बन्धु जैसा संबंध स्थापित करने का आध्यात्मिक साधन है, जिसे स्त्री प्रतिदिन करती है। इससे यह निष्कर्ष स्वाभाविक रूप से निकलता है कि ईश्वर-आराधना स्त्रियों के लिए बाधित नहीं, बल्कि वेद-समय से लेकर दयानन्दीय व्याख्या तक इसे अनिवार्य और अधिकारपूर्ण रूप से स्वीकार किया गया है।

स्त्रियों के राजनैतिक अधिकार :-

यजुर्वेद और दयानन्द के भाष्य के आधार पर स्त्री के राजनीतिक अधिकारों की स्थिति अत्यंत स्पष्ट और सम्मानपूर्ण मिलती है। वैदिक समाज में स्त्री केवल पारिवारिक दायित्वों तक सीमित नहीं थी, बल्कि वह न्याय, शासन, नीति-निर्णय और रक्षा के कार्यों में पुरुष के समान भाग लेती थी। यजुर्वेद में सभा और समिति जैसी सर्वोच्च राज्य-संस्थाओं में स्त्रियों के बोलने, विचार रखने और निर्णय में भाग लेने का उल्लेख मिलता है। दयानन्द के मत के अनुसार स्त्री यदि योग्यता रखती है तो वह सेना या पुलिस की सदस्य बन सकती है, और यदि जनता उसे चुने तो वह राजा या राष्ट्रपति पद तक भी पहुँच सकती है।

यजुर्वेद में यह भी संकेत मिलता है कि आवश्यकता पड़ने पर स्त्री युद्ध करती है, अपने पति का साथ देती है और सैन्य घोड़ों को शिक्षित करने तक का कार्य करती है। इससे स्पष्ट है कि राजनीतिक अधिकार केवल कागज़ी नहीं थे, बल्कि स्त्रियाँ युद्ध और रक्षा में भी स्वतंत्र रूप से भाग लेती थीं। इतिहास में भी इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं। कल्हण की राजतरंगिणी में रानी सूर्यमती, रट्टा और रत्ना देवी जैसी महिलाओं का राज्य संचालन में उल्लेख है। गुप्तकाल में चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की पुत्री प्रभावती ने स्वयं शासन चलाया। रानी झांसी का उदाहरण तो सदा के लिए भारतीय साहस और नेतृत्व का प्रतीक है।

वर्तमान समय में भी कई देशों में स्त्रियों ने सर्वोच्च पद संभाले हैं, जो वैदिक आदर्श को आधुनिक रूप में सिद्ध करता है। अत: यजुर्वेद का स्पष्ट संदेश है कि स्त्री राजनीतिक अधिकारों में किसी भी प्रकार से प्रतिबंधित नहीं, बल्कि वह शासन, न्याय और नेतृत्व में समान भागीदारी रखने में पूर्णत: सक्षम है।

महर्षि दयानन्द ने उस काल में स्त्री के राजनीतिक अधिकारों का समर्थन किया जब ऐसा कहना अत्यंत साहसपूर्ण माना जाता था। उनका दृष्टिकोण वेद-आधारित था और वे स्पष्ट रूप से मानते थे कि राज्य संचालन में स्त्री की भूमिका पुरुष के समान है। यजुर्वेद भाष्य में स्त्री को कई राजनीतिक अधिकारों का उल्लेख मिलता है-

1. नीतिविद्या ज्ञान

दयानन्द के अनुसार, विशेषत: क्षत्रिय स्त्री के लिए राजनीति और नीतिशास्त्र का ज्ञान आवश्यक है। जैसे धर्म और नीति से युक्त पुरुष होता है, वैसे ही स्त्री को भी होना चाहिए। यजुर्वेद भाष्य के एक स्थान पर तो यह स्पष्ट कहा गया है कि स्त्री को वेदज्ञ पुरुष की भाँति धनुर्वेद तथा अर्थवेद आदि की विद्या में दक्ष होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि स्त्री केवल घर की संरक्षिका नहीं, बल्कि राज्य-व्यवस्था के मूल सिद्धांतों की भी अभ्यासक हो। आगे यह भी उल्लेख है कि स्त्री को राजधर्म में स्थापित करके उसे बहुत सुख और शोभा प्राप्त होती है, अर्थात राज्य व्यवस्था में उसका स्थान सम्मानित और केंद्रीय है।

यजुर्वेद के ही एक अन्य मंत्र के भाष्य में कन्या को 'परम ऐश्वर्य कराने वाली नीति' के रूप में

वर्णित किया गया है, जो राजनीति और नेतृत्व में उसकी योग्यता की पुष्टि करता है। राजा को जिस राजनीति की विद्या पढ़नी चाहिए, वही विद्या रानी को भी पढ़नी चाहिए—यह विचार वेद-व्यवस्था की समतामूलक भावना का प्रमाण है।

सत्यार्थ प्रकाश में भी दयानन्द यही दृष्टिकोण दोहराते हैं कि क्षत्रिय स्त्री को सब विद्याएँ, युद्धविद्या और राज्यविद्या अवश्य पढ़नी चाहिए। इससे यह स्पष्ट होता है कि वे स्त्री को प्रशासन, युद्ध, नीति और शासन तीनों के क्षेत्र में पूर्णतः सक्षम मानते थे। उनकी दृष्टि में राजनैतिक अधिकार केवल पुरुष का क्षेत्र नहीं, बल्कि स्त्री भी उसके लिए समान रूप से योग्य और अधिकारी है।

2. न्यायासन

महर्षि दयानन्द ने स्त्रियों को न्यायिक अधिकार प्रदान करते हुए यह सिद्ध किया कि वेद-व्यवस्था में नारी केवल सामाजिक और पारिवारिक कार्यों तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि वह न्याय-प्रशासन की भी एक प्रमुख अधिकारी थी। उनके मत के अनुसार स्त्रियों के न्याय संबंधी मामलों का निर्णय स्त्री ही करें, पुरुष नहीं। इसका कारण यह है कि पुरुषों के सम्मुख स्त्री संकोच एवं लज्जा के कारण पूरी बात स्पष्ट रूप से न कह पाती, न लिखित बातों को सही प्रकार पढ़ सकती है, और न ही अपनी अंतर्वेदना व्यक्त कर सकती है। परन्तु स्त्रियों के सामने वे अपने मन की हर बात निर्भीक होकर प्रकट कर सकती हैं।

दयानन्द का कथन है कि जिस प्रकार पुरुषों के न्यायालय में न्यायाधीश पुरुष नियुक्त रहता है, उसी प्रकार स्त्रियों के न्याय के लिए न्यायाधीश स्त्री ही होनी चाहिए। वे न्याय व्यवस्था में स्त्री-पुरुष का स्पष्ट विभाजन नहीं करते, बल्कि यह कहते हैं कि 'जो पुरुष पुरुषों के न्यायाधिकार पर स्थित हो, उसकी स्त्री स्त्रियों के न्यायाधिकार पर स्थित हो।' इसका आशय यह है कि दोनों सहयोगी होकर न्याय प्रशासन चलाएँ, परंतु अपने-अपने क्षेत्र में व्यावहारिक सुविधा के अनुसार कार्य करें।

यजुर्वेद भाष्य में एक स्थान पर रानी को संबोधित करते हुए कहा गया है कि वह न केवल राज्य में सुखदायक और सुंदर व्यवहार करने वाली हो, बल्कि राज्य में न्यायकर्ता भी हो। अन्यत्र स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि रानी चक्रवर्ती राजा की भांति न्यायालय में बैठकर स्त्रियों का न्याय करे। दयानन्द यह भी बताते हैं कि जैसे राजा न्याय-धर्म पर स्थित होकर न्याय करता है, वैसे ही रानी भी न्याय-धर्म का पालन करते हुए समाज में न्याय स्थापित करे।

एक मंत्र के भावार्थ में स्त्री से यह कहा गया है कि वह अज्ञान का नाश करके न्यायाधीश स्त्रियों के साथ मिलकर बुद्धियुक्त होकर अपने पति को राज्य-कार्य में आनंदित करे। अर्थात् न्यायिक कार्य में रानी केवल औपचारिक पदाधिकारी नहीं, बल्कि विवेकपूर्ण निर्णय देने की सक्रिय भूमिका निभाती है।

3. युद्ध

वेदों में स्त्री का रूप केवल कोमल, दीन-हीन और निर्बल के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया, बल्कि उसे पराक्रमी, साहसी और रणकुशल बताया गया है। स्त्री केवल गृहकार्य तक सीमित नहीं रहती, बल्कि रक्षा और युद्ध से संबंधित आवश्यक ज्ञान भी रखती है। वे यान, रथ और अश्वों का संचालन करती हैं और युद्ध के व्यवहारों की जानकारी रखती हैं। यह बात केवल सिद्धांत मात्र नहीं, बल्कि अनेक वैदिक प्रसंगों तथा यजुर्वेद भाष्य के उल्लेखों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

स्त्री अश्वों को युद्ध की शिक्षा देती है और युद्धभूमि में उन्हीं शिक्षित अश्वों को सही प्रकार से मार्गदर्शन प्रदान करती है। वह शत्रु का सामना करने से भयभीत नहीं होती, बल्कि चुनौती मिलने पर युद्ध में कूद पड़ती है। स्त्री की यह सैनिक क्षमता किसी का अनुसरण मात्र नहीं, बल्कि स्वयंपूर्ण प्रशिक्षण और वीरता का परिणाम है। महर्षि दयानन्द द्वारा किए गए वर्णनों से स्पष्ट होता है कि यह वीरतापूर्ण कार्य केवल कल्पना न होकर वैदिक जीवन व्यवहार का अंग था।

स्त्री युद्ध में अपने पति का साथ निभाती है। रामायण में भी कैकयी के जीवन प्रसंग से यह बात स्पष्ट होती है कि वह दशरथ के साथ युद्ध में जाती थी और वीरता दिखाती थी। यजुर्वेद भाष्य में स्त्रियों को सैनिक शिक्षा प्राप्त पुरुष सेनापति के समान युद्धक साहस प्राप्त करने और शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने का आदेश मिलता है। उसे प्रेरणा दी जाती है कि वह दूर तक युद्धभूमि में जाकर शत्रुओं का विनाश करे और किसी को बिना पराजित छोड़े नहीं। साथ ही उल्लेख मिलता है कि जो स्त्री युद्ध में शत्रु वीरों को पराजित करती है, उसका सम्मान किया जाना चाहिए और उसे अन्नादि से सत्कार दिया जाना चाहिए।

महर्षि दयानन्द ने 'सत्यार्थप्रकाश' में भी स्पष्ट लिखा है कि स्त्रियों को युद्ध-विज्ञान का ज्ञान होना चाहिए और वे युद्धकला में पुरुषों से पीछे नहीं। ऋग्वेद में भी स्त्रियों को सैनिक शिक्षा देने और रणभूमि में सक्रिय रहने के संकेत स्पष्ट रूप से मिलते हैं। इस प्रकार वेदों की दृष्टि में स्त्री युद्ध और वीरता की अधिकारी है। अत: वैदिक समाज में स्त्री मात्र 'अबला' नहीं, अपितु 'सबला' है, जो धर्म की रक्षा और राष्ट्रहित में युद्ध करने में समर्थ मानी गई है।

साम्राज्ञी के कार्य-

यजुर्वेद भाष्य में वर्णित सम्राज्ञी का स्वरूप केवल राजा के साथ उपभोग में सम्मिलित रहने वाला नहीं, बल्कि राज्य की संपूर्ण व्यवस्था को समझने और निभाने वाली उत्तरदायी व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है। रानी केवल राजमहल की शोभा नहीं, वह राज्य की एक महत्त्वपूर्ण स्तंभ है, जिसके कंधों पर प्रजापालन की गंभीर जिम्मेदारी होती है। उसे यह आदेश दिया जाता है कि वह धैर्य, स्थिर और सहनशीलता में पृथ्वी के समान बने, ताकि वह प्रजा की सेवा, पालन और सुरक्षा कर सके। जिस प्रकार पृथ्वी सबको धारण करके भी विचलित नहीं होती, उसी प्रकार रानी को राज्य-व्यवस्था को सँभालते हुए शांत और निष्पक्ष रहना चाहिए।

यजुर्वेद भाष्य में यह भी उल्लेख है कि रानी, पृथ्वी की भाँति, राज्य के विस्तार और संवर्धन की प्रेरणा बनकर राज्य की उन्नति में निरंतर योगदान दे। वह केवल राजकार्य की प्रेरणा नहीं देती, बल्कि प्रजा के अन्न, धन और कल्याण का ध्यान रखकर उसे पोषित भी करती है। राजनीति की शिक्षा केवल राजा तक सीमित नहीं, बल्कि सम्राज्ञी को भी उसका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। ऐसा इसलिए कि जब राजा किसी कार्य में संलग्न हो, तो उसकी रानी उस कार्य में सहयोग करते हुए उसके साथ चल सके। राजकार्यों में रानी की भागीदारी उसे केवल सहायक नहीं बनाती, बल्कि अनेक अवसरों पर वह राज्य की धुरी बनकर भी खड़ी हो सकती है।

यजुर्वेद भाष्य में रानी को आकाश के समान वर्णित किया गया है—विस्तृत, अखंड, और भावनात्मक उद्वेलनों से मुक्त। यह गुण उसे राज्य-संचालन की जटिलताओं से संतुलित रखने की क्षमता प्रदान करता है, जिससे वह राज्य में किसी प्रकार का अशांति या अस्थिरता उत्पन्न न होने दे। आवश्यकता पड़ने पर रानी

राज्य का संपूर्ण भार संभाल सके—यह उसके अधिकार का सर्वोच्च स्वरूप है। राजनैतिक दृष्टि से यह अधिकार किसी भी स्त्री को प्राप्त होने वाला महानतम स्थान है, जो वेदों के विचार से उसे मान्य है। इस प्रकार साम्राज्ञी प्रजापालन, भूमिसंवर्धन, राजनैतिक सहभागिता और प्रशासनिक नेतृत्व का ऐसा आदर्श है, जो स्त्रियों की सर्वोच्च क्षमता और अधिकार का प्रमाण है।

स्त्री के कर्तव्य:-

ऋग्वेद में नारी को उच्च आदर्शों से विभूषित रूप में प्रस्तुत किया गया है। उसे प्रेमपूर्ण दृष्टि रखने वाली, पति के प्रति विरोध की भावना न रखने वाली तथा मंगल और कल्याण लाने वाली बताया गया है। वह पशुओं को सुख देने वाली, मन से निर्मल, प्रसन्नचित्त तथा श्रेष्ठ गुण, कर्म और विद्या से युक्त होती है। ऐसी स्त्री उत्तम वीर संतान उत्पन्न कर परिवार, समाज और राष्ट्र की उन्नति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वेद उसे केवल गृहस्थ जीवन तक सीमित नहीं करते, बल्कि उसे ऊर्जस्वित, प्रभावशाली और सृजनशील शक्ति मानते हैं, जिसका प्रभाव समस्त परिवार और समाज पर कल्याणकारी रूप से पड़ता है।

अथर्ववेद नारी को मधुर व्यवहार, क्रोधरहित स्वभाव, पतिव्रता, प्रिय एवं शांतिदायक वचनों से युक्त होने का उपदेश देता है। वह परिवार में सुख, शांति और सौहार्द की स्थापना करने वाली है। ज्ञानयुक्त और कल्याणकारी आचरण से वह घर को स्वर्ग समान बनाती है। इसी के साथ, वह दो और चार पैर वाले प्राणियों—अर्थात् मनुष्य और पशुओं— दोनों के लिए सुख देने वाली है, जिससे उसके विस्तारपूर्ण, संवेदनशील और पोषणकारी स्वरूप का परिचय मिलता है।

याज्ञवल्क्य के अनुसार नारी भोजन-निर्माण में दक्ष, संतुलित व्यय करने वाली और प्रसन्नचित्त हो। वह प्रतिदिन सास-ससुर का आदर करे तथा पति के प्रति हितकारी और उत्तम आचरण से युक्त रहे। संयम और शील उसके आचरण की पहचान हों। उसकी यह गृहस्थ-संरचनात्मक भूमिका केवल कर्तव्य नहीं, बल्कि परिवार में संतुलन, स्नेह और नैतिकता का आधार है।

मनुस्मृति भी इसी भाव को आगे बढ़ाते हुए कहती है कि नारी को सदैव प्रसन्नचित्त रहकर गृह-कार्य, भोजन-निर्माण और आर्थिक संयम में दक्ष होना चाहिए। उसका विनम्रता-पूर्ण व्यवहार और ख्यात अनुराग घर को सुखमय बनाते हैं। इस प्रकार वेद और स्मृतियाँ नारी को केवल आदेश नहीं देती, बल्कि उसके गुणों को स्वीकारते और उनके महत्व को स्थापित करती हैं।

कालीदास भी नारी के कर्तव्यों की चर्चा अत्यंत सुंदर शैली में करते हैं। वह उसे घर संभालने वाली, परिवार की सहमति देने वाली, पति की मित्र और कला में शिष्या बताते हैं। इस प्रकार नारी घर में एक सहयोगी, एक मार्गदर्शक और एक संवेदनशील जीवन-संगिनी के रूप में प्रस्तुत होती है।

स्त्री के सामान्य कर्तव्य व गुण :

महर्षि दयानन्द ने यजुर्वेद भाष्य में नारी के गुणों और कर्तव्यों को अत्यंत उच्च और सकारात्मक रूप में चित्रित किया है। नारी कुल को दूब की भांति बहुगुणित करने वाली, गृहाश्रम की नियम-व्यवस्था में कुशल तथा पृथ्वी के समान क्षमाशील और सुख प्रदान करने वाली मानी गई है। वह घर में शान्ति का स्रोत है और अपने आचरण से परिवार को सुख-संपन्न बनाती है। जल के समान शीतल स्वभाव से वह गृहकलह का समाधान करती है और परमात्मा द्वारा प्रदत्त सुखों को परिवार में बाँटती है। वह दु:खों को दूर करने वाली

तथा विविध विद्याओं से युक्त होकर श्रेष्ठ गुणों का प्रकाश फैलाने वाली है। ऐसे गुणों के कारण वह केवल शारीरिक रूप से नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक रूप से भी प्रबल दिखाई देती है।

वेदों में स्त्री को सागर के समान गंभीर और जलधारा के समान शांति की मूर्ति माना गया है। वह वीर सन्तान को जन्म देने वाली, औषधि और प्राकृतिक पदार्थों का ज्ञान रखने वाली, तथा पूर्व दिशा की तरह प्रकाश फैलाने वाली है। दक्षिण दिशा की भाँति विनय और विद्या का केन्द्र, पश्चिम दिशा के समान राजसी गरिमा से युक्त और उत्तर दिशा के समान स्वप्रकाशमान कही गई है। इसके साथ ही वह गृह के भीतर अधिकार और मर्यादा प्राप्त करने का पूर्ण सामर्थ्य रखती है। एक मन्त्र में स्त्री को सूर्य की भाँति तेजस्विनी, शुद्ध, पुष्टिकारिणी तथा पृथ्वी जैसी धारण शक्ति वाली कहा गया है। इस प्रकार उसकी क्षमाशीलता और धैर्य उसके कर्तव्यों का मूलाधार है।

यजुर्वेद में नारी को आकाश के समान क्षोभरहित और यंत्रवत् जितेन्द्रिय बनकर कुलदीपिका होने की प्रेरणा दी गई है। एक स्थल पर उसे पृथ्वी समान माता और द्युलोक समान पिता स्वरूप बताया गया है। एक मन्त्र के भावार्थ में उससे प्रार्थना की गई है कि जिस प्रकार भूमि काँटों को सहन कर भी सुखदायी होती है, वैसे ही तुम हमारे जीवन में सुख स्थापन करो, और जिस प्रकार न्यायाधीश दोषों को दूर करता है, वैसे ही तुम गृहकलह को दूर करो। यही वे गुण हैं जो उसे उत्तम गृहिणी बनाते हैं।

इन गुणों में उसके कर्तव्य स्वाभाविक रूप से निहित हैं—यदि वह पृथ्वी के समान क्षमाशील, जल के समान शांत और समुद्र के समान गंभीर है, तो यह उसके नैतिक कर्तव्य हैं कि वह उन गुणों को धारण कर समाज और परिवार की उन्नति करे। वेदों में नारी के लिए यह प्रार्थना भी की गई है कि वह सत्यवादी, सुशील, विदुषी और उत्तम गुणों से सम्पन्न हो; क्योंकि वही परिवार को समृद्धि और सुख प्रदान करती है।

महर्षि दयानन्द से पूर्व अनेक आचार्य और संन्यासी स्त्री के विषय में भ्रमपूर्ण तथा तिरस्कारपूर्ण धारणाएँ प्रस्तुत करते रहे। निवृत्ति मार्ग का महत्त्व बढ़ाने के लिए कुछ संतों ने भी स्त्री को मोह का कारण मानकर उसकी निंदा की। किन्तु सत्य यह है कि संसार की सभी कल्याणकारी व्यवस्थाएं नारी शक्ति के बिना न आरम्भ हो सकती हैं और न संपन्न। महर्षि दयानन्द ने इसी आध्यात्मिक और सामाजिक सत्य को वेदों के आलोक में स्थापित किया। उनके ग्रन्थों में नारी को माता, पत्नी, बहन और पुत्री के रूप में उच्च स्थान प्राप्त है।

वैदिक वाङ्मय के गंभीर अध्ययन से स्पष्ट होता है कि नारी को वेदाध्ययन, यज्ञ, यज्ञोपवीत, ईश्वर-उपासना जैसे धार्मिक अधिकार प्राप्त हैं। साथ ही सामाजिक सम्मान, नीति-निर्धारण, न्याय और युद्ध में उसकी भूमिका को स्वीकार किया गया है। प्रत्येक उत्तम कार्य में उसे पुरुष के समान अधिकार प्राप्त हैं और वह किसी दृष्टि से हीन नहीं है।

नारी स्वयं एक पूर्ण सत्तात्मक इकाई है। वह अपने प्रति, मातापिता के प्रति, पति और सन्तान के प्रति तथा समस्त गृह के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को समझती और पूरा करती है। यह वह अपनी आंतरिक उन्नति, उत्तम गुणों, सेवाभाव, निष्ठा, स्नेह, सावधानी और दृढ़ पवित्रता से करती है। बाह्य रूप से वह गृह को सुसज्जित करने वाली तो आंतरिक रूप से उसे प्रेम, सहानुभूति और बल प्रदान करने वाली है।

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों और उनके वेदभाष्य में नारी के प्रति यह उदात्त दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से

दृष्टिगोचर होता है। कुछ संदिग्ध, कालगत और लोक-प्रचलित निन्दापरक वचनों पर वैदिक दृष्टि से विचार करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि वे प्राचीन समाज की परिस्थिति और कालगत अधोगति की देन थे, न कि वैदिक दर्शन का प्रामाणिक स्वरूप। वास्तविक वैदिक दृष्टिकोण नारी को 'केतु'—मार्गदर्शक, 'मूर्धा'—श्रेष्ठ स्थान प्राप्त एवं 'तेजस्विनी' मानता है, जिसका अनुकरण स्वयं पति भी करे।

निष्कर्षत: वैदिक वाङ्मय और महर्षि दयानन्द के भाष्यों के आधार पर यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से सामने आता है कि नारी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष के समान अधिकार रखती है। धार्मिक क्षेत्र में वह वेदाध्ययन, यज्ञ, उपनयन, ईश्वरोपासना और ब्रह्मज्ञान की अधिकारी है। सामाजिक जीवन में वह शिक्षा देने वाली, सुयोग्य गृहिणी, परिवार की संरक्षिका और समाज का आधार है। राजनीतिक क्षेत्र में वह न्यायाधीश, नीति-निर्धारक, सेनानी, युद्धकुशल और आवश्यकता पड़ने पर राज्य संचालन करने वाली शासन-व्यवस्था की भागीदार है। यजुर्वेद भाष्य में नारी के गुणों को पृथ्वी की क्षमाशीलता, समुद्र की गंभीरता, जल की शांति, सूर्य के तेज और आकाश की विशालतापूर्ण सामर्थ्य के साथ जोड़ा गया है। उसके कर्तव्यों में सदाचार, शील, धर्म, विद्या, गृह-सम्भार, प्रजापालन, न्यायप्रियता और सहृदयता को स्थान मिला है। महर्षि दयानन्द ने वैदिक सत्य स्थापित करते हुए यह भी स्पष्ट किया कि नारी केवल सम्मान का विषय नहीं, बल्कि राष्ट्रनिर्माण की सक्रिय शक्ति है। कालक्रम में उत्पन्न भ्रांतियों और नारी-निन्दा के विपरीत वैदिक दृष्टिकोण नारी को उच्चतम स्थान देता है। वह पूर्ण इकाई है, जिसके बिना परिवार, समाज और राष्ट्र की उन्नति असंभव है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *'सत्यार्थ प्रकाश' — महर्षि दयानन्द द्वारा लिखा गया प्रमुख ग्रंथ, (जिसमें वेदों के भाष्य सहित नारी के धार्मिक, सामाजिक, और राजनैतिक अधिकारों का उल्लेख है)। आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली 1973*
2. *'यजुर्वेद भाष्य' — महर्षि दयानन्द द्वारा रचित यजुर्वेद का विस्तृत भाष्य, (जिसमें स्त्री के याज्ञिक कृत्यों और यज्ञ में उनकी भूमिकाओं का विश्लेषण है)। परोपकारिणी सभा, अजमेर*
3. *'ऋग्वेद भाष्य' — (इसमें स्त्रियों के अधिकार, यज्ञोपवीत संस्कार, और धार्मिक कर्तव्यों का वर्णन मिलता है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली*
4. *Scholarly papers such as [PDF] मानवीय मूल्यों में महर्षि दयानन्द का योगदान ', जहां दयानन्द के स्त्री विषयक विचारों का वैज्ञानिक विवेचन मिलता है।*
5. *प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी, डॉ. गजानन्द शर्मा, रचना प्रकाशन, खुल्दाबाद, इलाहाबाद, 1971*
6. *प्रमुख धर्म ग्रन्थों में नारी अधिकार, डॉ. ऋतु शुक्ला, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, 2016*
7. *यजुर्वेद भाष्य, महर्षि दयानन्द सरस्वती रामलाल कर्पूर ट्रस्ट, गुरुबाजार, अमृतसर, 1942*
8. *सत्यार्थ प्रकाश विमर्श, डॉ. रामप्रकाश, श्री घूड़मल प्रहलाद कुमार आर्य, धर्मार्थ ट्रस्ट, ब्यानिया पाड़ा, हिण्डौन सिटी, 2004*
9. *वेदों में भारतीय संस्कृति, ठाकुर पं. आघादत्त, हिन्दी समिति, सूचना विभाग लखनऊ उत्तरप्रदेश, 1967*
10. *कल्याण, नारी अंक, गीता प्रेस गोरखपुर, संवत् 2059*